Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN: 2581-6241 Volume - 3, Issue - 5, Sept-Oct – 2020
Bi-Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 3.589
Received on : 09/10/2020 Accepted on : 21/10/2020 Publication Date: 31/10/2020

अरविन्द घोष का शैक्षिक दर्शन और उसकी प्रासंगिकता

डॉ. डिगर सिंह फस्वाण
विभागाध्यक्ष (बी.एड) देवभूमि इन्स्टीट्यूट आफ प्रोफेशनल एजुकेशन, लालपुर, रूद्रपुर, उधम सिंह नगर
उत्तराखण्ड - 263148
Email--digarsingh.2011@gmail.com

सारांश: श्री अरविन्द घोष महान दार्शनिक के साथ-साथ विख्यात शिक्षाशास्त्री भी थे। उनका शिक्षा दर्शन उनके आध्यात्मिक योग दर्शन पर आधारित था। श्री अरविन्द ने अपने शिक्षा दर्शन में आध्यात्मिक उन्नति पर बहुत अधिक बल दिया था। वर्तमान भौतिकवादी युग में भी आध्यात्मिक उन्नति की बहुत आवश्यकता है, क्योंकि वर्तमान भौतिकवादी युग में मनुष्य अपनी अभीष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति में संलग्न रहता है तथा वह अपने मन की शान्ति और अपने भीतर के वास्तविक सुख और आनन्द से विरत हो रहा है। अरविन्द का मानना था कि सूचनात्मक ज्ञान कुशाग्र बुद्धि का आधार नही हो सकता, यह तो नवीन अनुसंधान तथा भावी क्रियाकलापों का आरम्भ मात्र होता है। वे आज की शिक्षा पद्यति में भारतीय प्रतिभा की तीन विशेषताओं आध्यात्मिकता, सृजनात्मकता तथा बुद्धिमत्ता का ह्रास एवं पतन देखते थे। इस पतन का कारण वे रूग्ण आध्यात्मिकता को मानते थे। श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन सर्वांग योग दर्शन पर आधारित था तथा वे सर्वांग जीवन के विकास पर बल देते थे। जब तक मनुष्य को आत्मिक शान्ति तथा आनन्द की प्राप्ति नहीं होगी तब तक भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति का भी कोई महत्व नहीं होता है। अरविन्द ने बालक के अन्तःकरण को विशेष महत्व दिया था। उनके अनुसार शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो बालक के अन्तःकरण के चारों स्तरों चित्त, मनस, बुद्धि तथा ज्ञान का क्रमिक विकास कर उसके मस्तिष्क तथा आत्मा की शक्ति का जीवित उत्कर्ष कर सके। उनके अनुसार मन विचार का प्रमुख माध्यम है। इसमें अनन्त शक्तियां होती है। इसी के द्वारा विभिन्न प्रकार के विचारों की उत्पत्ति होती है।

शब्दकुंजीः शैक्षिक दर्शन, प्रासंगिकता, योग दर्शन, अन्तःकरण, चित्त, मनस, बुद्धि तथा ज्ञान।

१ भूमिका :

विश्व में समय-समय पर कई विचारधाराओं का जन्म हुआ, जिन विचारधाराओं ने मानव जीवन तथा समाज को प्रभावित किया। विश्व की सबसे प्राचीन विचारधारा आदर्शवादी विचारधारा थी, जिसने नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना तथा सत्यं, शिवं, सुन्दरम के विकास पर बल दिया। श्री अरविन्द घोष आदर्शवादी विचारक थे लेकिन उनके दर्शन में आदर्शवाद, यथार्थवाद, प्रयोजनवाद तथा मानवतावादी विचारों का समन्वित रूप देखने को मिलता है। उनके दर्शन का मूल आधार उपनिषद का वेदान्त था। वे जीवन में आध्यात्मिक साधना, बह्मचर्य, और योग को विशेष महत्व देते हुए विकास के सिद्धान्त में विश्वास करते थे। श्री अरविन्द के अनुसार विकास का लक्ष्य केवल एक ही है वह है संसार में व्यापक दिव्य शक्ति अथवा पूर्ण एवं अखण्ड चेतना को प्राप्त करना। उनका मानना था कि विकास का यह क्रम निरन्तर चलता रहता है, इसमें एक ऐसी स्थिति आती है जब मानव अति मानव स्तर को प्राप्त करके स्वयं अति मानव बन जाता है जिससे मनुष्य को आश्चर्यजनक शान्ति, वास्तविक सुख तथा आनन्द की प्राप्ति होती है तथा वह सृष्टि के रहस्य तथा व्याप्त सत्यता का ज्ञान प्राप्त करने लगता है। श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षक का प्रमुख उपकरण अन्तःकरण होता है जिसमें चित्त, मनस, बुद्धि तथा ज्ञान निहित होते है। सच्ची तथा वास्तविक शिक्षा वह है जो बालक के लिए स्वतंत्र वातावरण का सृजन कर उसकी रूचियों के अनुसार उसकी क्रियात्मक, बौद्धिक, नैतिक तथा सौन्दर्यात्मक शक्तियों को विकसित करके उसके आध्यात्मिक विकास में सहायता प्रदान करे। श्री अरविन्द के अनुसार-"सच्ची तथा वास्तविक शिक्षा को मशीन से बना हुआ सूत नही होना चाहिए, अपितु इसको मानव के मस्तिष्क तथा आत्मा की शक्तियों का निर्माण अथवा जीवित उत्कर्ष करना चाहिए।" (मदान व पाण्डेय, 2016, पृ. 80) श्री अरविन्द ऐसी शिक्षण पद्धति के हिमायती थे जो बच्चों को कर्मठ नागरिक बनाने तथा आधुनिक युग की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम बना सके। वे शिक्षा के द्वारा बालक की समस्त अन्तर्निहित शक्तियों को विकसित करके उसे एक सफल मानव बनाने के पक्षधर थे।

२ शिक्षा का अर्थ

श्री अरविन्द घोष के शिक्षा दर्शन का मूल आधार आध्यात्मिक विकास, ब्रह्मचर्य तथा योग के द्वारा बालक का सर्वांगींण विकास करना था। उनके दर्शन का आधार उपनिषदों का मूल वेदान्त है। उनका विचार था कि आत्मा की शुद्धि परमार्थ से सम्भव है। उच्च सत्य की अनुभूति ही उनके दर्शन का परमार्थ था जिसे ज्ञान, आध्यात्मिकता, सृजनात्मता एवं बौद्धिकता से प्राप्त किया जा सकता है। उनके अनुसार अन्तःकरण ही शिक्षा का मुख्य साधन है। उनका प्रभाव आधुनिक शिक्षा पर स्पष्ट रुप से दिखलाई पड़ता है। उनका शिक्षा दर्शन आध्यात्मिक तप, योगाभ्यास और ब्रह्मचर्य पर आधारित है। उनके अनुसार कोई भी शिक्षा इन तीन बिन्दुओं को समाहित करके चलती है तभी मनुष्य का पूर्ण विकास संभव हो पाता है। श्री अरविन्द ने अपनी दिव्य दृष्टि की शक्ति से मानव जीवन के जिन गम्भीर तत्वों का उद्घाटन किया है, वे ही उनके शिक्षा दर्शन की आधारशिला है। इसमें हमें समग्र मानव जीवन व समग्र संसार के सर्वांगीण विकास का आभास मिल जाता है। उन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा योजना तथा मनुष्य के समग्र विकास से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं पर गहन चिन्तन-मनन किया और उनके समाधान के लिए विभिन्न सुझाव भी प्रस्तुत किए जो आज भी प्रासंगिक है। श्री अरविन्द के अनुसार-"सूचनाओं का संग्रह मात्र शिक्षा नहीं है। सूचनाएं ज्ञान की नींव नहीं हो सकती है। वे अधिक से अधिक सामग्री हो सकती है जिसके द्वारा जानने वाला अपने ज्ञान की बृद्धि कर सकता है अथवा ये वे बिन्दु है जहां से ज्ञान को आरम्भ किया जाय या नई खोजों को निकालना प्रारम्भ किया जाए। अतः शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो आधुनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करें तथा बच्चों को कर्मठ नागरिक बनायें।" (मदान व पाण्डेय, 2016, पृ. 83) भारत में मनुष्य के समग्र विकास तथा राष्ट्रोत्थान के लिए तत्कालीन शिक्षा कारगर सिद्ध नहीं हो पा रही थी। उस समय रोजगार प्राप्ति, व्यक्तित्व विकास, कौशल विकास तथा समग्र विकास जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। इन सभी समस्याओं के समाधान के लिए उपाय भी सर्वांग योग दर्शन में दृष्टिगत प्रतीत हो रहे थे। श्री अरविन्द ने भारतीय शिक्षा चिन्तन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। श्री अरविन्द के अनुसार-"सच्ची और वास्तविक शिक्षा केवल वही है जो मानव की अन्तर्निहित समस्त शक्तियों को इस प्रकार विकसित करती है कि वह उनसे पूर्ण रुप से लाभान्वित होता है।" (वालिया, जे.एस., 2009, पृ. 563) शिक्षा प्रक्रिया में बच्चे के अन्तःकरण के चारों स्तरों के कृत्रिम विकास पर बल देकर उसे ज्ञानी, स्वाभिमानी, विवेकशील तथा प्रगतिशील बनाने के लिए विशेष प्रयास किए जाने चाहिए। अरविन्द इस प्रकार की शिक्षा पद्यति चाहते थे जो शिक्षार्थी के ज्ञान क्षेत्र का विस्तार करे, जो बच्चों की स्मृति, निर्णयन शक्ति एवं सृजनात्मक क्षमता का विकास करे तथा जिसका माध्यम मातृभाषा हो। उनके अनुसार योग वह साधन है जिसके माध्यम से मनुष्य दिव्य शक्ति की अनुभूति करता है। ये सम्पूर्ण मानव जाति को अज्ञान, अन्धकार और मुत्यु से ज्ञान, प्रकाश और अमरत्व की ओर ले जाना चाहते थे इसलिए इनकी विचारधारा को सर्वांग योग दर्शन कहा जाता है। (लाल एवं तोमर., 2008, पृ. 403)

३ शिक्षा के उद्देश्य :

श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विकासशील आत्मा के सर्वांगीण विकास में सहायता प्रदान करना तथा उसे उच्च आदर्शो के प्रयोग हेतु सक्षम बनाना है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य की अन्तर्निहित बौद्धिक एवं नैतिक क्षमताओं का सर्वोच्च विकास होना चाहिए। श्री अरविन्द का मानना था कि व्यक्ति दैवीय शक्ति से समन्वित है और शिक्षा का उद्देश्य इस चेतना शक्ति का विकास करना है, इसीलिए वे मस्तिष्क को वे छठी ज्ञानेन्द्रिय मानते थे। उनके अनुसार शिक्षा का प्रयोजन इन छः ज्ञानेन्द्रियों का समुचित विकास तथा इनका उचित प्रयोग करना सिखाना होना चाहिए। श्री अरविन्द के अनुसार मस्तिष्क का उच्चतम सीमा तक पूर्ण प्रशिक्षण होना चाहिए, अन्यथा बालक अपूर्ण तथा एकागी रह जायेगा। अरविन्द के अनुसार-"शिक्षा मनुष्य के मस्तिष्क और आत्मा की शक्तियों का निर्माण करती है और उसमें ज्ञान, चरित्र और संस्कृति को जागृत करती है।" (लाल एवं तोमर., 2008, पृ. 405)

भौतिक विकास- मानव विकास का प्रथम सोपान द्रव्य है। श्री अरविन्द ने भौतिक विकास को शिक्षा का मुख्य उद्देश्य माना है जिसमें मनुष्य को सर्वप्रथम पंच महाभूतों से बने इस वस्तु जगत एवं उसके स्वयं के भौतिक शरीर के बारे में ज्ञान करा देना चाहते थे और उसे शरीर रक्षा एवं विकास की क्रियाओं में प्रशिक्षित कराना चाहते थे। इसके अन्तर्गत शारीरिक, सामाजिक एवं व्यावसायिक विकास के उद्देश्य निश्चित है। उनके अनुसार शिक्षा का प्रथम उद्देश्य बालक के शरीर का पूर्ण एवं शुद्ध विकास करना होना चाहिए। शारीरिक विकास एवं शुद्धि के बिना आध्यात्मिक विकास संभव नहीं है। भौतिक विकास सभी प्रकार के विकासों का आधार होती है।

मानसिक विकास- शिक्षा के द्वारा बच्चों का उचित मानसिक विकास किया जाना चाहिए। छात्र की क्षमताओं के अनुसार उसकी रुचियों, अभिरुचियों, स्मृति, कल्पना, चिन्तन, सृजनात्मक तथा निर्णय शक्तियों का विकास करके उसका मानसिक विकास करना है। मन मानव सत्ता का सबसे चंचल भाग है। मन की शिक्षा के पांच अंग होते है, एकाग्रता की शक्ति को जागृत करना, मन की व्यापकता का विकास करना, उच्चतम लक्ष्य की ओर समस्त विचारों को संगठित करना, विचारो को संयमित करना तथा मानसिक स्थिरता का विकास करना। इन्होंने मानसिक शक्तियों के अन्तर्गत स्मरण, चिन्तन, कल्पना तथा निर्णय आदि शक्तियों को विशेष स्थान दिया है।

इन्द्रियो का विकास एवं प्रशिक्षण- श्री अरविन्द के अनुसार ज्ञान प्राप्त करने के लिए छः इन्द्रियां होती है। नेत्र, कर्ण, नाक, जीभ, त्वचा और मन। श्री अरविन्द मन को भी ज्ञानेन्द्रिय मानते थे। उनके अनुसार बच्चे की इन्द्रियों का विकास तथा प्रशिक्षण तभी होगा जब उसका स्नायु, चित्त और मन शुद्ध होगा। श्री अरविन्द के अनुसार पांच इन्द्रियां बाहर से ज्ञान ग्रहण करती है और मन के द्वारा बुद्धि से सम्पर्क स्थापित होता है। नेत्र, कान, जीभ, त्वचा से जो प्रतिमाएं चित्त में बनती है मन इनको बुद्धि तक पहुचाता है।

अन्तःकरण का विकास- श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य अन्तःकरण का विकास करना होना चाहिए। उनके अनुसार अन्तःकरण के चार स्तर है- चित्त, मनस, बुद्धि तथा ज्ञान। इन चारों के विकास से ही मनुष्य पूर्ण मानव बन सकता है। चित्त स्मृति का भण्डार कक्ष है। यह पूर्व जन्मों एवं वर्तमान जीवन के अतीत में प्राप्त किए गए मानसिक प्रभावों का संग्रह है। यह चित्त वह है जिसमें सक्रिय स्मृति उन वस्तुओं का चयन करती है जिनकी उसे समय-समय पर आवश्यकता होती है। मनस वह स्तर है जहां अन्य सभी सतहें एकत्रित हो जाती है। मनस पांच ज्ञानेन्द्रियों स्पर्श, प्राण, स्वाद, दृष्टि और ध्वनि से प्राप्त अनुभवों को प्राप्त करके इनको विचारों एवं प्रत्यक्षीकरण में बदल देता है। शिक्षा के द्वारा बच्चे में छः ज्ञानेन्द्रियों के उचित प्रयोग की क्षमता का विकास होना चाहिए। इसके लिए प्रारम्भिक योगाभ्यासों को महत्व दिया जाना चाहिए। बुद्धि मनस से ऊपर के स्तर पर कार्य करती है। यह मन में आने वाले ज्ञान के तत्वों को व्यवस्थित करती है। इसमें विस्तृत सृजनात्मक, संश्लेषणात्मक, विश्लेषणात्मक एवं आलोचनात्मक क्षमताएं होती है। ज्ञान मन का अन्तिम स्तर है । यह ज्ञान की प्रत्यक्ष दृष्टि है जो क्रान्तिकारी होते हुए मनुष्य को सत्य का देवता बना देती है। इससे उच्च ज्ञान की यात्रा शुरु होती है।

नैतिकता का विकास- श्री अरविन्द के अनुसार शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य बच्चे की प्रकृति, आदतों और भावनाओं को शुद्ध और सुन्दर बनाकर उसके हृदय को परिवर्तन करना और उसकी नैतिकता का विकास करना है। इसकी प्राप्ति के लिए उन्होंने उत्तम आदर्शो का अनुकरण, सत्संग एवं धार्मिक शिक्षा को अनिवार्य बताया है। अरविन्द के अनुसार धर्म कोई भी हो वह मनुष्य को अपने लिए, दूसरों के लिए और ईश्वर के लिए जीना सिखाता है। इनका मानना था कि धर्म के अभाव में मनुष्य अपने आध्यात्मिक स्वरुप को नही पहचान सकता है।

आध्यात्मिक विकास- अरविन्द के अनुसार बच्चे की वैयक्तिक और प्रच्छन्न शक्तियों को पूर्णता की ओर अग्रसर करके उसका आध्यात्मिक विकास करना शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य है। श्री अरविन्द के अनुसार-"प्रत्येक व्यक्ति में कुछ न कुछ दैवीय अंश होता है, कुछ अपना स्वयं का होता है, जिसको पूर्ण और सशक्त बनाया जा सकता है। शिक्षा का कार्य है- इसकी खोज करना, इसको विकसित करना तथा इसका प्रयोग करना। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए-विकसित होने वाली आत्मा का विकास करना, जो उसमें सर्वोत्तम है, उसे व्यक्त करना तथा उसे श्रेष्ठ कार्य के लिए पूर्ण बनाना।" श्री अरविन्द की शिक्षा का चरम लक्ष्य सम्पूर्ण मानव जाति का सर्वांगीण विकास करना था। केवल ज्ञान की प्राप्ति ही शिक्षा नहीं है परन्तु सच्ची शिक्षा वह है जिसमें मानव का सम्पूर्ण तथा सर्वांगीण विकास करने की क्षमता हो।

४ शिक्षा की पाठ्यचर्या :

श्री अरविन्द का मानना था कि बच्चों को अनेक विषयों का सतही ज्ञान देने की अपेक्षा कुछ चयनित विषयों का जिसमें बच्चों की रुचि हो उनका गहन अध्ययन करने पर बल दिया जाना चाहिए। वे पाठ्यक्रम में भारतीय इतिहास एवं संस्कृति को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग मानते थे, क्योकि उनका विचार था कि प्रत्येक बच्चे में इतिहास बोध होता है जो परिकथाओं, खेलों, विचारों के आदान प्रदान तथा विभिन्न गतिविधियों से प्रकट होता है। अतः बच्चों को अपने देश के साहित्य एवं इतिहास के प्रति अभिरुचि विकसित करनी चाहिए। अरविन्द के अनुसार प्रत्येक बच्चे में जिज्ञासा, खोज, नवाचार, विश्लेषण तथा संश्लेषण करने की प्रवृत्ति होती है। बच्चों में इन गुणों के विकास के लिए वे पाठ्यक्रम में विज्ञान को स्थान देते थे। विज्ञान द्वारा बच्चे प्राकृतिक

वातावरण को समझते है, उनमें नये-नये तथ्यों को जानने की प्रवृत्ति का विकास होता है, वे नये तथ्यों की खोज करने में सक्षम होते है तथा उनमें वस्तुनिष्ठ बुद्धि के विकास हेतु अनुशासन का विकास होता है। अरविन्द ज्ञान के विकास के लिए मस्तिष्क को बहुत महत्व देते थे इसलिए वे मस्तिष्क को छठी ज्ञानेन्द्रिय मानते थे। मस्तिष्क को प्रधानता देने के कारण वे पाठ्यक्रम में मनोविज्ञान विषय को सम्मिलित करना चाहते थे जिससे बच्चों मे वैयक्तिक विभिन्नता का ज्ञान हो सके तथा उनमें समग्र जीवन दृष्टि का विकास हो सके। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वे पाठ्यक्रम में दर्शन व तर्कशास्त्र को भी स्थान देते थे।

५ शिक्षण विधियां :

अरविन्द के अनुसार शिक्षण एक विज्ञान है। जिसके द्वारा बच्चों के व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है। उनके अनुसार वास्तविक शिक्षण का प्रथम सिद्धान्त है कि कुछ भी पढ़ाना संभव नहीं अर्थात बाहर से बच्चों के मस्तिष्क पर कोई भी चीज न थोपी जाए। बच्चा जिस प्रकार के ज्ञान को प्राप्त करना चाहता है तथा उसका मस्तिष्क जिस प्रकार के ज्ञान को प्राप्त करने को तैयार है उसे उसके लिए उचित अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया द्वारा बच्चे के मस्तिष्क की क्रिया को उचित दिशा प्रदान किया जाना चाहिए। प्रत्येक बच्चे को उसकी व्यक्तिगत विभिन्नताओं, अभिवृत्तियों एवं योग्यताओं के अनुसार शिक्षा देने की व्यवस्था की जानी चाहिए। बच्चे को अपनी प्रवृत्ति अर्थात स्वधर्म के अनुसार विकास के अवसर मिलने चाहिए। अरविन्द मनस अर्थात मस्तिष्क को छठी ज्ञानेन्द्रिय मानते थे, जिसके विकास पर वे अधिक बल देते थे। उनके अनुसार विकसित मस्तिष्क से सूक्ष्म दृष्टि उत्पन्न होती है जिससे निष्पक्ष दृष्टिकोण विकसित होता है। योग द्वारा चित्त शुद्धि शिक्षण का लक्ष्य होना चाहिए। अरविन्द की दृष्टि से वही शिक्षक प्रभावी शिक्षण कर सकता है जो उपरोक्त विधि से बच्चों का विकास कर सकता है। उनके अनुसार शिक्षण प्रक्रिया में बच्चों को विषय वस्तु को रटाया नहीं जाना चाहिए बल्कि उन्हें स्वयं के प्रयत्नों से आत्मसात करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए, इसके लिए शिक्षण प्रक्रिया को रुचिकर बनाया जाना चाहिए। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में बच्चों को क्रिया करने, रचना करने के अधिक से अधिक अवसर प्रदान किए जाने चाहिए और उन्हें स्वयं के अनुभव से सीखने के अवसर देना चाहिए।

६ शिक्षक संकल्पना :

श्री अरविन्द शिक्षक को पथ प्रदर्शक और सहायक के रुप में मानते थे। शिक्षक का कर्तव्य बच्चों को ज्ञानेन्द्रियों तथा मस्तिष्क के सही उपयोग द्वारा उनका पर्यवेक्षण, अवधान, निर्णय तथा स्मरण शक्ति का विकास करने में सहायता प्रदान करना होना चाहिए। शिक्षक को बच्चों की तर्कशक्ति के विकास द्वारा उनमें अन्तर्दृष्टि उत्पन्न करना चाहिए। उनके अनुसार शिक्षक प्रशिक्षक नहीं है, वह तो सहायक एवं पथ प्रदर्शक है। वह केवल ज्ञान ही नहीं देता बल्कि वह ज्ञान प्राप्त करने की दिशा भी दिखलाता है। शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया की उत्कृष्टता उपयुक्त शिक्षक पर ही निर्भर होती है। श्री अरविन्द शिक्षक को निर्देश देने वाला, आज्ञा देने वाला या उपदेश देने वाला नहीं मानते थे, बस उसे बच्चों की रुचियों, अभिरुचियों, क्षमताओं तथा योग्यताओं को परखने वाला तथा उसके अनुसार उसे वातावरण देने वाला मनोवैज्ञानिक के रुप में मानते थे।

७ शिक्षार्थी संकल्पना :

श्री अरविन्द बच्चे को शिक्षा प्रक्रिया का केन्द्र मानते थे। उनके अनुसार प्रत्येक बच्चे में कुछ न कुछ जन्मजात सामान्य शक्तियां, विशिष्ट योग्यताएं तथा विभिन्न प्रतिभाएं अवश्य होती है, परन्तु बच्चों की इन योग्यताओं में भिन्नता होती है। उनके अनुसार शिक्षा की व्यवस्था भी इन्हीं योग्यताओं के आधार पर की जानी चाहिए। शिक्षा प्रक्रिया को बच्चे की व्यक्तिगत रुचि, रुझान व योग्यताओं के आधार पर संगठित किया जाना चाहिए। अरविन्द के अनुसार प्रत्येक बच्चे में आत्मा होती है। यह आत्मा अपने में पूर्ण होती है। इसके कारण ही समस्त ज्ञान अन्तर्निहित होता है। इस पूर्ण ज्ञान की अनुभूति ब्रह्मचर्य तथा एकाग्रचित ध्यान करने से हो सकती है। बच्चों को स्वयं करने, आदर्शो, मूल्यों, प्रतिमानों का निर्माण करने तथा नये तथ्यों को जानने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए, जिससे वे रटे-रटाये गये मार्ग पर न चलकर स्वयं अपने लिए नवीन मार्ग का सृजन कर सकें। उनके अनुसार बच्चे पर उसके पर्यावरण का प्रभाव भी पड़ता है। ये बच्चों को स्वस्थ्य एवं उच्च पर्यावरण के प्रभाव में रखने पर बल देते थे, जिसमें उनकी ज्ञानेन्द्रियों का विकास और प्रशिक्षण हो सके तथा वे सत्य तथा नवीन ज्ञान की ओर अग्रसर हो सकें।

८ विद्यालय संकल्पना:

अरविन्द के अनुसार विद्यालय बच्चों के सर्वांगीण विकास का केन्द्र होना चाहिए। विद्यालयों को बच्चों के भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार के विकास में सहायक होना चाहिए। बालक के भौतिक विकास के लिए विद्यालय में विश्व की सभी श्रेष्ठ भाषाओं, साहित्य, सभ्यता, संस्कृति, गणित, विज्ञान आदि की शिक्षा का उचित प्रबन्ध होना चाहिए तथा बच्चों को अपनी

अभिरूचि के अनुसार क्रिया करने तथा स्वयं के अनुभवों से सीखने के अवसर प्रदान किए जाने चाहिए। आध्यात्मिक विकास के लिए बच्चे को श्रम करने, कर्तव्य पालन करने और ध्यान करने के अवसर प्रदान किए जाने चाहिए। उनके अनुसार विद्यालय भौतिक प्रगति और योग साधना के केन्द्र होने चाहिए।

९ अनुशासन संकल्पना:

श्री अरविन्द के अनुसार स्वेच्छा से कर्तव्य पालन करना ही सच्चा अनुशासन है। अनुशासन की प्राप्ति के लिए अरविन्द ने दो बातो पर विशेष बल दिया। पहला यह कि शिक्षको को बच्चों के सम्मुख आदर्श आचरण प्रस्तुत करना चाहिए क्योंकि शिक्षक बच्चे का आदर्श होता है तथा प्रारम्भ में वह अनुकरण द्वारा सीखता है। दूसरा यह कि यदि वे फिर भी अन्यथा आचरण करें तो उन्हें प्रेमपूर्वक समझाना चाहिए। उनके अनुसार दण्ड व कठोरता से वास्तविक अनुशासन की प्राप्ति नहीं की जा सकती है। दण्ड को ये अमानवीय कृत्य मानते थे। अरविन्द अनुशासन में बच्चों की स्वाभाविक भावनाओं को पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान करने के समर्थक थे। वे प्रभावात्मक अनुशासन में विश्वास करते थे। उनकी दृष्टि से वास्तविक अनुशासन आन्तरिक होता है। बच्चों के मन में ऐसी भावनाओं का विकास किया जाना चाहिए जिससे वे अच्छाई की ओर अग्रसर हो सकें, नैतिकता का पालन करें और अपने अध्ययन में एकाग्र हो सकें ।

१० राष्ट्रीय शिक्षा:

श्री अरविन्द अपने देश की गुलामी से दुखी थे और उस समय की शिक्षा पद्यति के प्रति इनके मन में भारी असन्तोष था। इन्होने इस बात पर जोर दिया कि शिक्षा को भारतीय रुप तभी प्रदान किया जा सकता है जब देश स्वतंत्र होगा। श्री अरविन्द के अनुसार राष्ट्रीय शिक्षा वह है जो देश के नियंत्रण में राष्ट्रीय लोगों को राष्ट्रीय पद्यति से दी जाती है। ये शिक्षा को भारतीय भाषाओं के माध्यम से देने पर बल देते थे और उसे बह्मचर्य एवं आध्यात्मिक जीवन पर आधारित करना चाहते थे। उनके अनुसार मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया जाना चाहिए जिससे शिक्षा को जनसाधारण के लिए सुलभ किया जा सकता है। श्री अरविन्द संकुचित राष्ट्रीयता में विश्वास नहीं करते थे। ये मानवतावादी व्यक्ति थे इसलिए इनका दृष्टिकोण बड़ा व्यापक था। ये अन्तर्राष्ट्रीयता के पक्षधर थे। श्री अरविन्द के आश्रम में देश विदेश की भाषाओं और संस्कृतियों को स्थान दिया जाता था। उनके अनुसार शिक्षा की सहायता से बच्चों का समुचित विकास कर उनमें राष्ट्रीयता तथा देश प्रेम की भावना का विकास करने पर बल दिया जाना चाहिए।

११ एकीकृत शिक्षा:

श्री अरविन्द के अनुसार एकीकृत शिक्षा वह है जो मनुष्य की पांच आधारभूत क्रियाओं-भौतिक, जीवन्त, मानसिक, आत्मिक एवं आध्यात्मिक से समृद्ध होती है। भौतिक शरीर पूर्ण सुन्दरता और सामंजस्य की अभिव्यक्ति होगी, जीवन्तता अजेय शक्ति और बल का प्रतीक होगा, मन शुद्ध ज्ञान का वाहन होगा, आत्मिक रुप से सच्चे और शुद्ध प्यार का संचार करेगा और आध्यात्मिकता संपूर्णता का वाहन बनेगी। शिक्षा की ये अवस्थाएं व्यक्ति के विकास के साथ-साथ क्रमानुसार एक दूसरे पर सफलता प्राप्त करती है। सच्ची शिक्षा जीवन पर्यन्त चलनी चाहिए। अरविन्द का मानना है कि-"शिक्षा मनुष्य के मस्तिष्क और आत्मा की शक्तियों का निर्माण करती है। यह ज्ञान, चरित्र और संस्कृति का उत्कर्ष करती है।

१२ आधुनिक शैक्षिक प्रक्रिया पर श्री अरविन्द का प्रभाव :

श्री अरविन्द का भारतीय आधुनिक शिक्षा पर प्रभाव चिरस्थाई प्रतीत होता है। श्री अरविन्द का हृदय तत्कालीन समय में प्रचलित शिक्षा के दोषों से दुखी था। इसी के परिणामस्वरुप उन्होंने मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और नैतिक नियमों पर आधारित शिक्षा का नया स्वरुप देश के सम्मुख प्रस्तुत किया। श्री अरविन्द ने छात्र केन्द्रित शिक्षा पर बल दिया। (वालिया, जे. एस. 2009, पृ. 569) श्री अरविन्द केवल एक दार्शनिक ही नहीं थे अपितु विख्यात शिक्षाशास्त्री भी थे। उनका शिक्षा दर्शन मूलतः उनके आध्यात्मिक योग दर्शन पर आधारित था। अरविन्द का शिक्षा दर्शन सर्वांग जीवन का विकास है जिसमें तन, मन और आत्मा का विकास सम्मिलित है। श्री अरविन्द की मुख्य देन पाण्डिचेरी में स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा केन्द्र था। श्री अरविन्द ने अनुभव किया कि भारतीयों का दृष्टिकोण धीरे-धीरे भौतिकवादी होता जा रहा है। जिससे उनके अन्दर की दिव्य ज्योति बुझती जा रही है। भारत को ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जो भारतीयों के मस्तिष्क तथा आत्मा की शक्ति का निर्माण अथवा जीवित उत्कर्ष कर सके। इसी दृष्टि से श्री अरविन्द ने पांडिचेरी में अरविन्द आश्रम खोला जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की तथा नये सिद्धान्तों पर आधारित करके शिक्षा को एक नया रुप भारतीय जनमानस के सामने रखा जो बच्चे के स्वभाव के अनुकूल हो तथा जो ब्रह्मचर्य द्वारा तप, तेज एवं विद्युत् की बृद्धि से बालकों के मन, शरीर, हृदय तथा आत्मा को

सशक्त बना सके। एक भारतीय दार्शनिक के नाते वे भारतीय आदर्शो, भारतीय मूल्यों, संस्कृति एवं आध्यात्मिकता के उच्चतम स्तर के प्रति समर्पित थे। श्री अरविन्द के अनुसार केवल उसी प्रकार की शिक्षा को प्राप्त करके भारतवासियों का कल्याण हो सकता है जो भारत की आत्मा और उनकी वर्तमान तथा भावी आवश्यकता के अनुकूल हो। श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन मूल रूप से आध्यात्मिक साधना, बह्मचर्य, और योग पर आधारित था। उनका मानना था कि इस प्रकार की शिक्षा से ही मनुष्य का सर्वांगीण विकास हो सकता है। उनके अनुसार शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक की समस्त अन्तर्निहित शक्तियों का इस प्रकार से विकास करना होना चाहिए जिससे वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम बन सके। आर0 एस0 मनि के अनुसार- "शिक्षा पर श्री अरविन्द घोष के विचार सिद्ध करते है कि वे हमारे देश के सबसे प्रमुख और प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्रियों में एक थे। उनका मानना था कि जिस प्रकार शिक्षा की हमें हमारे देश के लिए आवश्यकता है, वह भारतीय आत्मा, आवश्यकता, स्वभाव और संस्कृति के अनुकूल होनी चाहिए।" (मदान व पाण्डेय, 2016, पृ. 80) श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन वर्तमान शिक्षा तथा मानव जीवन के परिदृश्य में भी सार्थक तथा प्रासंगिक सिद्ध होता है, क्योंकि वे दर्शन में उपनिषद का वेदान्त, जीवन में आध्यात्मिक साधना, बह्मचर्य, और योग को विशेष महत्व देकर मनुष्य का सर्वांगीण विकास करना चाहते थे तथा इसके माध्यम से वे मनुष्य को संसार में व्यापक दिव्य शक्ति अथवा पूर्ण एवं अखण्ड चेतना का आभास कराना चाहते थे। श्री अरविन्द ने आध्यात्मिक योग दर्शन के द्वारा मनुष्य के समग्र विकास पर बल दिया था। उनके अनुसार शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक को अच्छा तथा श्रेष्ठ नागरिक बनाना होना चाहिए जो आध्यात्मिक विकास, साधना, ब्रह्मचर्य, तप, योग, भारतीय आदर्शो, भारतीय मूल्यों तथा भारतीय संस्कृति के चरम स्वरूप को प्राप्त करके ही प्राप्त किया जा सकता है।

संदर्भ :

१ वालिया, जे. एस. 2009. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा. अहम पाल पब्लिशर्स, जालन्धर पंजाब.
२ मदान, पूनम और रामशकल पाण्डेय. 2016. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार. अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा.
३ लाल, रमन बिहारी, और गजेन्द्र सिंह तोमर. 2008. विश्व के श्रेष्ठ शैक्षिक चिन्तक. आर. लाल बुक डिपो, मेरठ.
४ त्यागी, जी. एस. डी. और पी. डी. पाठक. 2010. शिक्षा के सामान्य सिद्धान्त. विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा.
५ सक्सैना, स्वरूप, एन. आर. और के. पी. पाण्डेय. 2003. शिक्षा दर्शन तथा महान शिक्षाशास्त्री. आर. लाल बुक डिपो, मेरठ.
६ गुप्त, लक्ष्मीनारायण और मदनमोहन. 2005. महान भारतीय शिक्षाशास्त्री. कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद.